उत्तराखण्ड पर्यावरण : शिक्षा एवं चेतना-5

उत्तराखण्ड का सोना 'बाँज'

उत्तराखण्ड का सोना : बाँज

लेखक
डा० शरद चन्द्र जोशी
डा० यशपाल सिंह पांगती
डा० दत्तराम जोशी
डा० देवी दत्त दानी

तकनीकी सहयोग
डा० जीवन सिंह मेहता

चित्रकार
विश्वंभर नाथ साह 'सखा'
मानचित्र
केवलानन्द पाण्डे

उत्तराखण्ड सेवा निधि
अल्मोड़ा

भूमिका

प्रस्तुत पुस्तिका में मनुष्य एवं पर्यावरण के गहन संबंधों का उल्लेख करते हुए उत्तराखण्ड के बहुमूल्य पेड़ बाँज का परिचय दिया गया है। पर्यावरण विकास संबंधित इस महत्वपूर्ण विषय पर जानकारी उपलब्ध कराने हेतु सरल हिंदी भाषा में ऐसे प्रयास बहुत कम हुए हैं। उक्त परिचय में बाँज के महत्व, उपयोगिता एवं वातावरण संतुलन में इसके योगदान व संबंधित पक्षों को ध्यान में रखते हुए, इस वृक्ष के संरक्षण की विशेष आवश्यकता पर प्रकाश डाला गया है तथा साथ ही बाँज के पेड़ों को बचाने, नये पेड़ लगानें एवं इनकी सुरक्षा व रखरखाव जैसे व्यवहारिक प्रश्नों के बारे में चित्रों सहित आवश्यक जानकारी भी दी गई है।

आशा है, उत्तराखण्ड के सभी निवासी, विशेष रूप से ग्रामीण अंचलों में रहने वाले विद्यार्थी एवं किसान यहां प्रस्तुत जानकारी का उपयोग कर लाभान्वित होंगे और पर्यावरण के संरक्षण में योगदान देंगे।

चित्र सूची

चित्र 1 – उत्तराखण्ड का मानचित्र

चित्र 2 – फलियांट, फनियाट, हरिन्ज बाँज (क्विरकस ग्लोका)

चित्र 3 – बाँज (क्विरकस इनकाना)

चित्र 4 – रियांज, सांज बाँज (क्विरकस लानीजिनोसा)

चित्र 5 – तिलन्ज, मोरू, तिलोंज बाँज (क्विरकस फ्लोरीवण्डा)

चित्र 6 – खरसू, खरू बाँज (क्विरकस सेमेकार्पीफोलिया)

चित्र 7 – जैविक-अजैविक तत्वों के मध्य संतुलन चक्र

चित्र 8 – पेड़ से चारा काटने की गलत विधि

चित्र 9 – पेड़ से चारा काटने की सही विधि

चित्र 10 अ, ब, स – बीज बोने की विभिन्न विधियां

चित्र 11 अ, ब – सामाजिक रूप से घेर बाड़-घास व पेड़ों की प्राकृतिक वृद्धि एवं सुरक्षा

विषय सूची

1.	परिचय	1
2.	उत्तराखण्ड में पाये जाने वाले बाँज की प्रजातियां	3
	(i) फलियाँट, फनियाट, हरिन्ज बाँज	4
	(ii) बाँज	4
	(iii) रियाँज, साँज बाँज	4
	(iv) तिलन्ज, मोरू, तिलोंज बाँज	5
	(v) खरसू, खरू बाँज	7
3.	बाँज एवं इसकी प्रजातियों के उपयोग	8
	(i) हरी पत्तियों का उपयोग चारे के रूप में	9
	(ii) बाँज की पत्तियों का उपयोग खाद के रूप में	9
	(iii) बाँज की लकड़ी के विभिन्न उपयोग	10
	(iv) बाँज नमी बनाए रखने में सहायक	10
4.	पर्यावरण विकास–संरक्षण एवं रखरखाव के प्रश्न	11
5.	वनों का संरक्षण एवं रखरखाव	12
6.	बाँज के वनों का ही शोषण क्यों ?	13
7.	बाँज के पेड़ कैसे बचायें	14
8.	पेड़ कैसे लगायें–बचाव व रखरखाव	17
9.	पौधों का बचाव व रखरखाव	21
10.	निष्कर्ष	22
11.	तालिका 1	24
12.	तालिका 2	25

उत्तराखण्ड का सोना: बाँज

1. परिचय

उत्तराखण्ड में कई प्रकार के पेड़ पाये जाते हैं, जैसे चीड़, देवदार, भोजपत्र, भीमल, खड़िक, पईयाँ, मेहल, च्यूरा, साल, शीशम, बाँज इत्यादि। ये सभी अत्यन्त उपयोगी हैं लेकिन इन सब में सबसे अधिक उपयोग में आने वाला पेड़ है बाँज। यह अपने विस्तृत वितरण, बहुमुखी उपयोग एवं ग्रामीण क्षेत्रों की गतिविधियों से जुड़ा रहने के कारण अन्य पेड़ों की तुलना में ईंधन व चारा जैसे आवश्यक साधन उपलब्ध कराने की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। बाँज की यद्यपि उत्तराखण्ड में कुल मिलाकार पाँच प्रजातियाँ हैं, प्रस्तुत वर्णन में बाँज शब्द का प्रयोग बाँज की सभी प्रजातियों के सन्दर्भ में किया गया है। इस पेड़ की प्रमुख विशेषता यह है कि यह सदाबहार है। वर्ष भर हरा-भरा रहने के कारण चारे की दृष्टि से यह वृक्ष विशेष उपयोगी है। केवल इतना ही नहीं, बाँज का पेड़ अन्य दृष्टियों से भी अत्यन्त लाभदायक सिद्ध हुआ है। पर्वतीय क्षेत्र की भूमि में नमी रखने, जल संसाधनों की पूर्ति करने, मिट्टी के कटाव को रोकने एवं उसकी खनिजों से गुणवत्ता बढ़ाने में बाँज के पेड़ का उल्लेखनीय योगदान है।

बाँज के वृक्ष में कई गुण पाये जाते हैं। जहाँ एक ओर यह पर्यावरण एवं विविध प्राकृतिक क्रियाओं के मध्य संतुलन बनाये रखने में सहायक है दूसरी ओर यह मनुष्य की आर्थिक एवं दैनिक जीवन यापन सम्बन्धी क्रियाओं से भी बहुत गहराई से जुड़ा हुआ है। शीत प्रधान क्षेत्रों में पाये जाने व धीमी गति से बढ़ने के कारण यह वृक्ष अधिक घनत्व वाला व कठोर होता है तथा इसकी जड़ें लम्बी व फैली हुई होती हैं। साथ ही इसमें विषम जलवायु दशाओं में उगने की भी क्षमता होती है। बाँज के पेड़ों की लम्बी तथा फैली हुई जड़ें, पानी के वेग को कम करती हैं, जिससे भूमि के कटाव को रोकने तथा भूमि की उपजाऊ शक्ति को बनाए रखने में एवं पानी को जज्ब करने में बहुत अधिक सहायता मिलती है। बाँज के वन जहाँ मनुष्य के लिए एक स्वास्थ्य-वर्धक वातावरण उपलब्ध कराते हैं, वहीं उच्च भागों में जल को अपनी जड़ों के समूह में अवशोषित व भूमिगत कर, यह वर्ष भर सदानीरा, जीवन दायिनी नदियों एवं अन्य जल धाराओं व जल के श्रोतों जैसे नौले, धारे आदि का सतत प्रवाह बनाये रखने में भी सहायक हैं। बाँज के वन वास्तव में

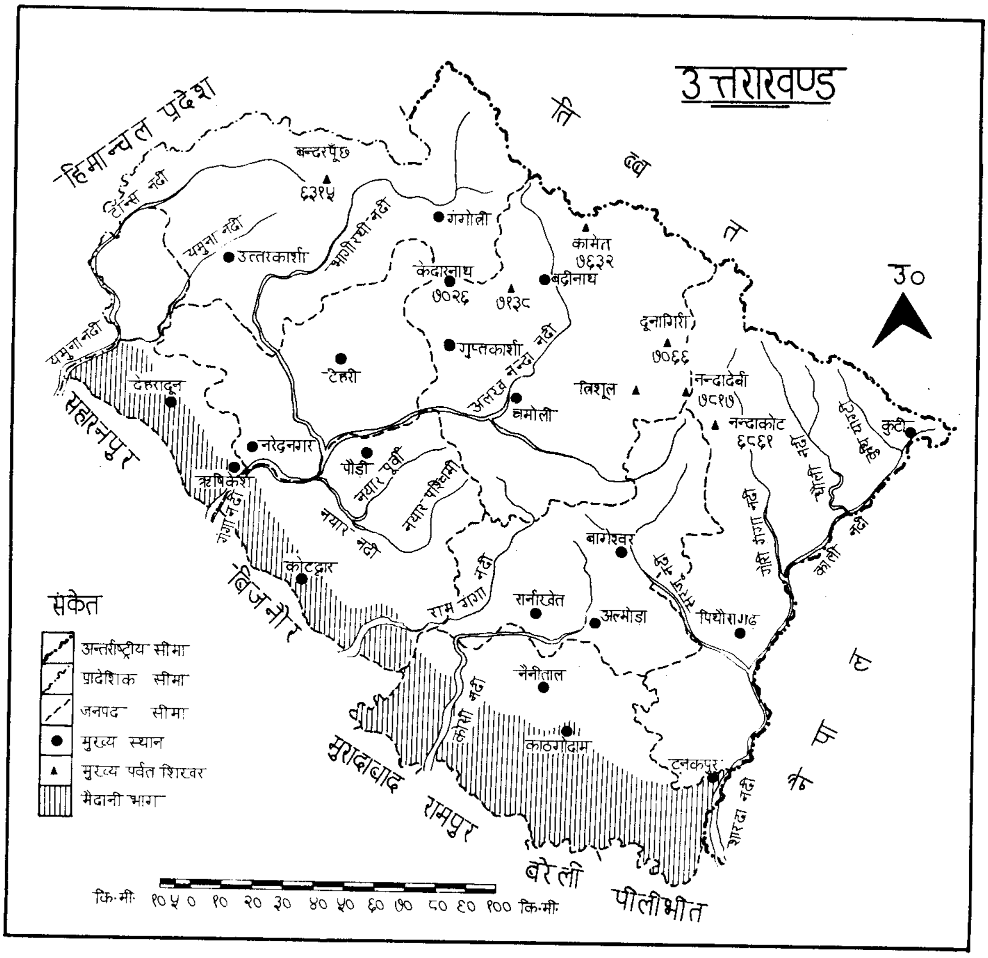

चित्र 1 : उत्तराखण्ड का मानचित्र

एक बहुमूल्य प्राकृतिक वरदान हैं। खेती, भूमि की उपजाऊ शक्ति को कम करती है और बाँज के वन इस कमी को प्राकृतिक रूप से पुनः पूरा कर देते हैं क्योंकि इसकी पत्तियों में उपजाऊ शक्ति बढ़ाने वाले कई आवश्यक तत्व होते हैं।

बाँज की पत्तियों का वनस्पति विकास में भी पर्याप्त योगदान होता है। बाँज का पेड़ स्वयं हर तरह से उपयोगी तो है ही, साथ ही साथ यह अन्य कई प्रकार की विशिष्ट वनस्पति प्रजातियों को फलने-फूलने के लिए उचित वातावरण भी प्रदान करता है, जिसका सबसे अच्छा उदाहरण बरसात के दिनों में देखा जा सकता है जब बाँज के तने एवं शाखाओं को अनेक प्रकार की वनस्पति की प्रजातियाँ ढक लेती हैं जैसे औरकिड, मौस, फर्न, लाइकन इत्यादि इत्यादि।

2. उत्तराखण्ड में पाये जाने वाले बाँज की प्रजातियाँ

उत्तराखण्ड में बांज के वनों का विस्तार विभिन्न ऊँचाइयों पर मुख्य रूप से नम तथा उत्तरी ढलानों में पाया जाता है। सामान्यतः ये वन समुद्र तल से 1200 मीटर (4000 फीट) की ऊँचाई से लेकर 2500 मीटर (8300 फीट) के मध्य पाये जाते हैं जैसा कि तालिका 1 से स्पष्ट होता है। इस वृक्ष की विभिन्न प्रजातियों में तिलोंज बाँज एवं खरसू बांज अत्यधिक ऊँचाई मे पाये जाते हैं जबकि रियांज बाँज मध्यवर्ती ऊँचाइयों में उगता है। फलियाँट प्रजाति, जो बाँज की भांति ही निचले एवं बसासत वाले क्षेत्रों की विशेषता है, बाँज के समान विस्तृत रूप से नहीं पाई जाती। स्वाभाविक रूप से सभी प्रजातियों में बाँज ही सबसे अधिक जानी भी जाती है और पाई भी जाती है। विशेष बात यह है कि मानव कुप्रभावों का यही अत्यधिक शिकार भी हुई है। इन कारणों से ही इसके संरक्षण की भी सबसे अधिक आवश्यकता है क्योंकि एक तो इसका वितरण पर्वतों में जनसंख्या के वितरण के ही अनुरूप है, दूसरा इसके बीजों को, कई प्रकार के जंगली पशु पक्षियों द्वारा खाया एवं नष्ट किया जाता है तथा साथ ही इसके बीजों को नानाप्रकार के कीट एवं फफूंदी से शीघ्र हानि होने की सम्भावना भी रहती है। ऐसी दशायें बांज की अन्य प्रजातियों में कम पाई जाती हैं।

चित्र 2 : फलियांट, फनियाट, हरिन्ज बाँज (क्विरकस ग्लोका)

(i) फलियाँट, फनियांट, हरिन्ज बाँज

बाँज की यह प्रजाति उत्तराखण्ड में 900 मीटर (3000 फीट) से 2000 मीटर (6600 फीट) की ऊँचाई के बीच में मिलती है। इसकी विशेषता यह है कि यह पानी के नजदीक या नदी नालों के पास विशेष रूप से उगती है। इस पेड़ का उपयोग कई प्रकार से किया जाता है, जैसे चारा, ईंधन, कृषि यंत्रों आदि के लिये। यह प्रजाति कुमायूँ एवं गढ़वाल क्षेत्र में विशेषकर छायादार व नम गधेरों के समीप पायी जाती है। यह वृक्ष उपरोक्त स्थानों में छोटे–छोटे समूहों में पाये जाते हैं तथा इनके विशाल एवं विस्तृत जंगल नहीं मिलते हैं।

(ii) बाँज

अन्य की तुलना में यह प्रजाति सबसे विस्तृत एवं उल्लेखनीय है तथा उत्तराखण्ड में 1200 मीटर (4000 फीट) की ऊँचाई से लेकर 2500 मीटर (8300 फीट) तक पायी जाती है। कहीं-कहीं अत्यन्त सीमित स्थानों पर उपयुक्त वातावरण मिलने के कारण बाँज के वृक्ष चीड़ व साल के वनों के साथ-साथ 450 मीटर तक (1500 फीट) के निचले क्षेत्रों में भी देखने को मिलते हैं। यह एक बहुत उपयोगी प्रजाति सिद्ध हुई है क्योंकि इसकी लकड़ी का उपयोग खेती-बाड़ी के काम में आने वाले औजारों को बनाने तथा ईंधन के लिये सबसे अधिक मात्रा में किया जाता रहा है। बाँज की लकड़ी से बने औजार व औजारों के भाग अधिक टिकाऊ होते हैं तथा ईंधन के रूप में भी यह लकड़ी आसानी से उपलब्ध एवं सरलता से जलने वाली और अधिक ऊर्जा उपलब्ध कराने वाली सिद्ध हुई है। इसके साथ-साथ बाँज की पत्तियाँ इस क्षेत्र के पशुओं की विशाल संख्या को चारा प्रदान कराने की दृष्टि से आज भी अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं एवं भविष्य में भी बहुत महत्वपूर्ण रहेंगी।

(iii) रियाँज, साँज बाँज

यह प्रजाति उत्तराखण्ड में 1800 मीटर (6000 फीट) की ऊँचाई से लेकर 2450 मीटर (8100 फीट) की ऊँचाई के मध्य पाई जाती है। भौगोलिक वितरण की दृष्टि से रियाँज कुमायूँ के लगभग सभी जिलो में अधिक मात्रा में पाया जाता है जबकि गढ़वाल में इसका वितरण अत्यन्त सीमित रूप में है।

रियाँज के पेड़ बांज के पेड़ों के साथ-साथ उगते हैं। कभी-कभी यह प्रजाति बांज रहित भागों में भी पायी जाती है। इस पेड़ का उपयोग भी बांज की तरह कई प्रकार से किया जाता है। रियाँज बाँज अधिकांशतः चूनायुक्त मिट्टी के क्षेत्रों में ही उगता है और इस कारण इसका वितरण अत्यन्त बिखरा हुआ है।

चित्र 3 : बाँज (क्विरकस इनकाना)

(iv) तिलन्ज, मोरू, तिलोंज बाँज

यह प्रजाति उत्तराखण्ड के उच्च पर्वतीय भागों में लगभग 1800 मीटर (6000 फीट) की ऊँचाई से लेकर 3000 मीटर (10000 फीट) की ऊँचाई के बीच पाई जाती है। तिलोंज बांज की प्रजाति का वृक्ष गहरी मिट्टी, नम उत्तरी ढालों एवं चूनायुक्त क्षेत्रों में घने वनों के रूप में पाया जाता है। इसकी लकड़ी अत्यधिक टिकाऊ होती है। ईंधन के रूप में यह अन्य बांजों के मुकाबिले बहुत अधिक ताप शक्ति वाली होती है। तिलंज बांज के पेड़ अधिक मोटाई वाले व घने होते हैं। ये वन उच्च पर्वतीय भागों में ही पाये जाते हैं जहां सीमित मानव अधिवास मिलते हैं। कम जनसंख्या के कारण तथा सीमित मानव गतिविधियों के कारण यद्यपि इन

चित्र 4 : रियांज, सांज बाँज (क्विरकस लानीजिनोसा)

वनों का इतना ह्रास नहीं हुआ है जितना मानव आबादी के समीप होने के कारण बाँज के वनों का, परन्तु तिलोंज के वनों में भी बड़े पैमाने पर स्थानीय एवं स्थानान्तरित होने वाले पशुओं के लिये चारे की निर्भरता बनी रहती है और इस कारण इन वनों में भी धीरे-धीरे कमी आती जा रही है। एक विशेष प्रकार का कीट तिलोंज की पत्तियों में तरह-तरह की छोटी-बड़ी गाँठ बनाता है, जो खाने एवं स्वाद में मीठा होता है। इसका उपयोग कुछ भागों में फलों की तरह खाने के लिये भी किया जाता है—विशेषकर पश्चिमी गढ़वाल के जौंसार बाबर क्षेत्र में।

चित्र 5 : तिलन्ज, मोरू, तिलोंज बाँज (क्विरकस फ्लोरीवण्डा)

(v) खरसू या खरू बाँज

उत्तराखण्ड में खरसू बाँज सबसे अधिक ऊँचाई वाले भागों में प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। यह प्रजाति 2100 मीटर (7000 फीट) की ऊँचाई से लेकर 3500 मीटर (11600 फीट) के बीच पायी जाती है। खरसू वनों की सबसे प्रमुख विशेषता इनका विस्तृत वितरण एवं अत्यधिक घने रूप में पाया जाना है। स्थानीय निवासियों के मौसमी स्थानान्तरण एवं पशुचारक क्रियाओं के कारण इन उच्च भागों में भी बाँज की इस प्रजाति का उपयोग विभिन्न रूपों में किया जाता रहा है जैसे—चारा, कच्ची झोपड़ियों के लिये लकड़ी तथा ईंधन आदि में।

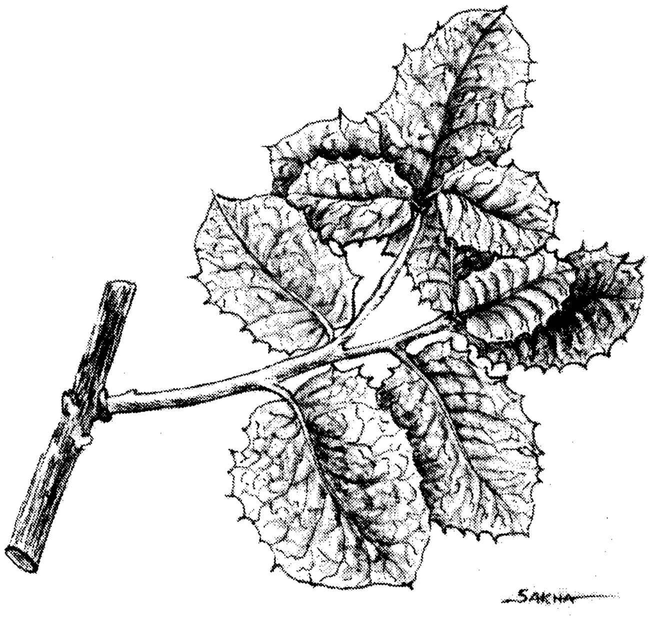

चित्र 6 : खरसू, खरू बाँज (क्विरकस सेमेकार्पीफोलिया)

3. बाँज एवं इसकी प्रजातियों के उपयोग

जैसा कि हम सभी जानते हैं, उत्तराखण्ड के पर्वतीय भागों की अधिकांश आबादी 400 मीटर एवं 2500 मीटर की ऊँचाइयों के बीच पायी जाती है। प्रकृति ने भी उत्तराखण्ड के पर्वतीय अंचल की विभिन्न ऊँचाइयों में कई प्रकार के बाँज की प्रजातियाँ मनुष्य को प्रदान की हैं, जिनका मनुष्य अपनी दैनिक गतिविधियों, पशुओं के भोजन, कृषि यंत्रों, मकान निर्माण, ईंधन आदि जैसे महत्वपूर्ण कार्यों के लिये व्यापक रूप से उपयोग करता आ रहा है। स्थानीय उपयोग में ऊँचाई के अनुसार बाँज की प्रजातियों में अन्तर आने के कारण, भिन्नता देखने को मिलती है।

आदिकाल से ही इस पर्वतीय अंचल में मनुष्य का प्रमुख व्यवसाय कृषि एवं पशुचारण रहा है। कृषि व्यवस्था में जहाँ पशुओं की विशेष भूमिका रहती है, पशुचारण क्रिया में पशु ही मनुष्य के जीवन यापन का एवं दैनिक गतिविधियों का साधन होता है। वास्तव में सीमित साधन एवं पर्वत प्रधान दशाओं के मध्य कभी-कभी पशु एवं कृषि एक दूसरे के पूरक सिद्ध हुए हैं। इसी कारण पशुओं का हमारे दैनिक जीवन में विशेष महत्व रहा है और इनकी विशाल संख्या के लिये चारा उपलब्ध किया जाना अति आवश्यक है जिसकी पूर्ति हम सीधे रूप में चरागाहों एवं जंगलों से करते हैं।

(i) हरी पत्तियों का उपयोग चारे के रूप में

उत्तराखण्ड में पशुओं को चारा उपलब्ध कराने की दृष्टि से बाँज एवं इसकी प्रजातियों का बहुत बड़ा योगदान रहा है तथा इसकी हरी पत्तियों को काटकर पशुओं को खिलाया जाता है। ये समस्त प्रजातियाँ सदाबहार हैं और इस कारण भी इनका उपयोग चारे के रूप में विशेष महत्व रखता है क्योंकि सर्दी व गर्मी के मौसम में जब भूमि पर चारे की साधारणतया कमी रहती है, इसकी पूर्ति बाँज की पत्तियों से ही की जाती है।

(ii) बाँज की पत्तियों का उपयोग खाद के रूप में

जैसा कि हम सब जानते हैं कि बांज की पत्तियों को गोबर के साथ मिश्रण करने से बहुत अच्छे किस्म की खाद बनती है,साथ ही सूखी पत्तियां भी खाद निर्माण में अपना योगदान देती हैं। साधारणतया गाँवों के घरों के आस-पास या सामने गोबर को खुले रूप में खाद बनाने के लिये एकत्रित किया जाता है जो स्वास्थ के लिये हानिकारक तो होता ही है और इससे उत्तम प्रकार की खाद भी नहीं बनती है। बहुमूल्य खाद के निर्माण के लिये बांज की पत्तियों को उपयोग में लाया जाता है। अच्छी खाद बनाने के लिये घरों के समीप या आस-पास गड्ढा खोदकर गोबर को पत्तियों के साथ मिलाना चाहिए। इस विधि से खाद और भी अच्छी मिलेगी व यह जल्दी भी तैयार होगी। इस विधि के प्रयोग से वातावरण को स्वच्छ रखने में भी सहायता मिलेगी।

स्वाभाविक रूप से भी बाँज की सूखी पत्तियों के भूमि पर गिरते रहने एवं सड़ने के कारण उत्तम प्रकार की प्राकृतिक खाद (ह्यूमस) का निर्माण होता रहता है जो भूमि की उर्वरता बनाये रखने में एवं जल अवशोषण करने में सहायक होती है। प्राकृतिक रूप से बनी इस खाद का उपयोग पौधालयों, खेतों व फूलों को उगाने की क्यारियों में भी किया जाता है। यह खाद बांज के वनों में अधिक मात्रा में पायी जाती है। साथ ही यह वजन में हल्की व भुरभुरी होती है।

उपरोक्त दो बातों के अलावा बांज की सूखी पत्तियों का एक और महत्व है। जाड़ों में बर्फ एवं पाले से होने वाले नुकसान को ये पत्तियां कम करती हैं। जंगली जीव जंतुओं को भी ठंड से बचाती हैं। ऐसा देखा गया है कि अधिक ठंड के दिनों में जीव-जन्तु अपना निवास स्थान इन्हीं पत्तियों के ढेरों के आसपास बनाते हैं। इस तरह बांज की पत्तियों का सम्बन्ध मनुष्य जीवन से तो है ही, साथ ही मिट्टी को उपजाऊ बनाने तथा पशुओं के लिए भोजन प्राप्त करने में भी यह सहायक होती है। मनुष्य बाँज की पत्तियों की उपयोगिता के बारे में जानता तो है परन्तु पर्यावरण विकास में इन पत्तियों का कितना बड़ा योगदान है इसे भी समझना उतना ही आवश्यक है। बाँज का हर वृक्ष इन पत्तियों के कारण ही मानव व जीव

मात्र को जीवन दायिनी आक्सीजन प्रदान करने के लिये एक छोटे से कारखाने का काम करता है।

(iii) बाँज की लकड़ी के विभिन्न उपयोग

(क) **ईंधन व ऊर्जा प्राप्त करना** –हम सब जानते हैं कि खाना मनुष्य की प्राथमिक आवश्यकता है जिसे पकाने तथा बनाने के लिए ऊर्जा की पूर्ति हम लकड़ी या कोयला जला कर करते हैं। आदिकाल से ही मनुष्य की ऊर्जा प्राप्त करने के लिए वनों पर निरन्तर निर्भरता बनी रही है। उत्तराखण्ड के ग्रामीण क्षेत्रों में प्राचीन समय से ही बाँज का वृक्ष ईंधन के लिये लकड़ी प्राप्त करने का प्रमुख स्रोत रहा है क्योंकि बाँज की लकड़ी अन्य पेड़ों की तुलना में बहुत अधिक ताप शक्ति देती है और इसका प्रयोग कोयला बनाने के लिये भी किया जा सकता है। बांज की लकड़ी का कोयला उत्तम कोटि का होता है जो कमरों को गरम रखने एवं तापने के लिये अति उपयोगी है क्योंकि इसकी कम मात्रा से ही अधिक ऊर्जा प्राप्त होती है तथा धुआं भी कम होता है। इसके अतिरिक्त बांज की लकड़ी ईंधन के रूप में भी एक उत्तम साधन सिद्ध हुई है।

(ख) **इमारती लकड़ी के रूप में** – बाँज की लकड़ी टिकाऊ व मजबूत तो होती ही है, इसमें कीड़ा भी नहीं लगता। इस कारण इसका उपयोग इमारती लकड़ी के रूप में भी यदाकदा होता है।

(ग) **कृषि व अन्य औजारों के निर्माण के लिए** –कृषि में काम आने वाले तरह-तरह के औजार जैसे नसूड़ा (हल) व इसके अन्य भाग तथा औजारों के लिये जैसे बीण (बीन) या मूंठ या सुयांट (सुल्याठ), लाठी, डंडे, ठंगरे व घेर बाढ़ आदि के लिए बांज की लकड़ी का बहुत प्रयोग किया जाता है। इसके अतिरिक्त यह लकड़ी ठोस व भारी होने के कारण खेतों में गुड़ाई-निराई तथा खेतों को समतल करने के लिए विशेष प्रकार के बनाए गए औजारों के लिए भी अच्छी सिद्ध हुई है। ये औजार मैई या मै, पाटा, दन्याली, आदि के रूप में सभी ग्रामीण क्षेत्रों में पाये जाते हैं।

(iv) बाँज नमी बनाये रखने में सहायक

बाँज के वन अधिक वर्षा तो आकर्षित करते ही हैं, इन पेड़ों के कारण हमेशा मिट्टी में अधिक नमी बनी रहती है। इस कारण बाँज के जंगलों वाली भूमि, भूमिगत जल को संचित कर निकटवर्ती भागों में श्रोतों, नदियों व नालों के उद्गम के रूप में पानी उपलब्ध कराने में सहायक होती है। इसी कारण बाँज के जंगलों में हमेशा ठंडा बना रहता है। इस प्रकार बाँज बहुउपयोगी व अत्यन्त मूल्यवान होने के कारण ही उत्तराखण्ड का सोना कहा गया है।

4. पर्यावरण विकास-संरक्षण एवं रखरखाव के प्रश्न

हमारे चारों ओर जो भी प्रकृति और मनुष्य द्वारा बनाई गई चीजें हैं, वे सब मिलकर पर्यावरण बनाती हैं। जिस मिट्टी में पेड़-पौधे उगते हैं और बढ़ते हैं, जिस हवा में हम सांस लेते हैं तथा जो पानी हम पीते हैं, ये सब पर्यावरण के मुख्य अंग हैं। ये समस्त जैविक व अजैविक तत्व जैसे जीव-जन्तु, कीटाणु, पेड़-पौधे, जलवायु, मिट्टी, पांनी आदि संतुलित रूप से मानव के लिए एक स्वस्थ वातावरण का निर्माण करते हैं। यह संतुलन प्रकृति में सहअस्तित्व एवं पारस्परिक अन्र्तसम्बन्धों की भावना का भी प्रतीक है। स्वाभाविक रूप से इन तत्वों में किसी एक के भी ह्रास का परिणाम सम्पूर्ण वातावरण क्रिया के लिए हानिप्रद और अन्ततः मनुष्य के लिए विनाशकारी सिद्ध हो सकता है।

उदाहरण के लिए एक तालाब में जहां मिट्टी, पानी, हवा जैसे अजैविक तत्व हैं, वहीं इसमें पानी में उगने वाली नाना प्रकार की वनस्पति भी पायी जाती है। तालाब के इन पौधों में असंख्य प्रकार के कीड़े-मकोड़े पैदा होकर विकसित होते रहते हैं। इसी तालाब के समीप ही मेंढ़क की उत्पत्ति एवं इसके निवास की आदर्श दशायें भी पायी जाती हैं, जिनका मुख्य भोजन तालाब के पानी व नजदीकी भागों में पलने वाले कीड़े-मकोड़े होते हैं। पानी व इसके आस-पास रहने वाला सांप अपने अस्तित्व के लिए इन मेंढ़कों को अपना भोजन बनाता है और अन्ततः इन

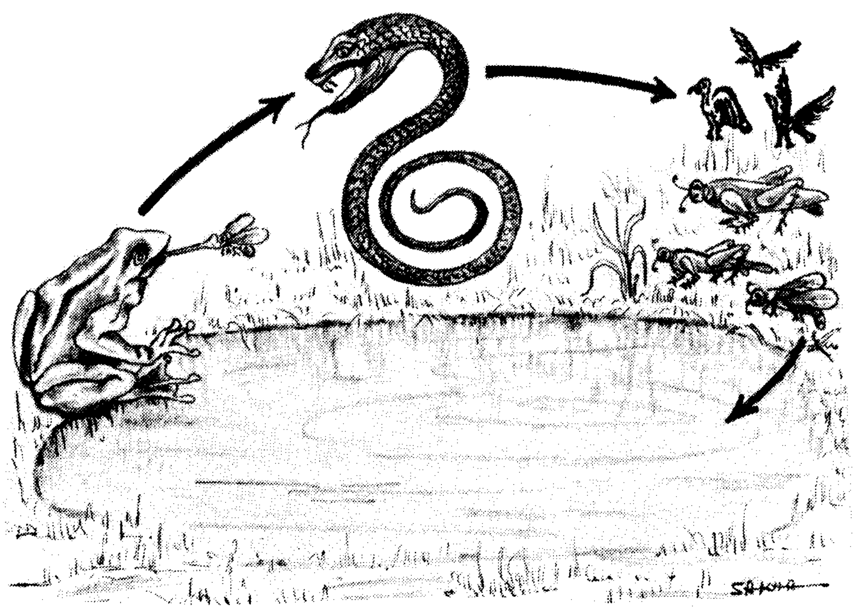

चित्र 7 : जैविक-अजैविक तत्वों के मध्य संतुलन चक्र

सांपों को चील या गिद्ध जैसे मांसाहारी पक्षी अपना भोजन बनाते हैं। प्रकृति के नियमानुसार इन मांसाहारी पक्षियों को कोई अन्य जानवर नहीं खाता और मृत्यु के बाद इनका विशेष प्रकार की जैविक प्रक्रिया द्वारा विघटन होता है जिसके फलस्वरूप ये प्राणी वातावरण के अजैविक तत्वों में पुनः विलीन हो जाते हैं। इस प्रकार वातावरण में जैविक व अजैविक तत्वों के मध्य यह संतुलन एक चक्र के रूप में सदैव बना रहता है तथा यह इस बात का संकेत है कि इन सभी तत्वों में गहरा पारस्परिक अन्तर्सम्बन्ध है। किसी भी एक तत्व के अभाव में यह चक्र पूरा नहीं हो सकेगा और यहीं से वातावरण असंतुलन की क्रिया का आरम्भ होता है।

वातावरण संतुलन एवं ह्रास का यह नियम खेती, वन, चरागाहों, पीने के पानी, मिट्टी आदि सभी में उपरोक्त रूप से लागू होता है और तभी हम देखते हैं कि पेड़ों के विनाश से मिट्टी का कटाव बढ़ता है जो खेती की भूमि को बरबाद तो करता ही है साथ में पानी की कमी, निचले क्षेत्रों में बाढ़ जैसी समस्याओं को भी जन्म देता है। यदि पेड़ बचे रहें तो वातावरण तो संतुलित रहेगा ही, इसके साथ और अन्य विनाशकारी दशाओं के उत्पन्न होने की सम्भावना भी कम हो जाएगी। अतः इन सभी तत्वों के संतुलन व अन्तर्सम्बन्धों को ही समझना जरूरी नहीं है वरन् इस ज्ञान को कार्यरूप में परिणत करना भी उतना ही आवश्यक है।

5. वनों का संरक्षण एवं रखरखाव

आदिकाल से ही मानव वनों पर निर्भर रहता आया है और उसने इसके विभिन्न उत्पादों को ही उपयोगी नहीं बनाया है वरन् वन मनुष्य की जीवन पद्धति एवं संस्कृति का ही एक अभिन्न अंग बन गये हैं। हम वनों से तरह-तरह के लाभ प्राप्त करते आ रहे हैं जैसे चारा, ईंधन, इमारती लकड़ी, फल, रेशे, दवाइयां इत्यादि। इसके अतिरिक्त विशाल वनों को काटकर खेती के प्रयोग में भी लाया जाता है और इसी प्रकार फलों के पेड़ लगाने के लिए भी अनियमित रूप से वनों को काटा जाता है। ईंधन और पशुओं के चारे के लिये तो वनों पर सबसे अधिक निर्भरता है जिस कारण आज वनों की कमी दिखाई देने लगी है और साथ-साथ पर्यावरण असन्तुलित होने लगा है। यह असंतुलन जहां एक ओर मनुष्य की विविध क्रियाओं और जीवन पद्धति में बाधा उत्पन्न कर रहा है, वहीं दूसरी ओर प्रकृति में भी असन्तुलन एवं अनियमितताएं उत्पन्न करता आ रहा है। इसीलिए आज पूरे विश्व में पर्यावरण ह्रास की समस्या के कारण मानव जीवन निरन्तर संकटमय होता जा रहा है।

उपरोक्त समस्याओं के निराकरण के लिए अधिकाधिक संख्या में पेड़ लगाने, वनों को बचाने तथा वनों की उपयोगिता के बारे में समाज को जागरूक करने के कार्यक्रम चलाये जा रहे हैं। वैज्ञानिकों के विचार से किसी भी भू-भाग में

एक-तिहाई भाग वनों का होना आवश्यक है। यदि पेड़ इसी रफ्तार में काटे जाते रहे तो निश्चय ही एक समय में पेड़ों की कमी से पृथ्वी के समस्त प्राणियों के लिए जीवित रहना कठिन हो जायेगा। इसीलिए संसार में आज इस समस्या की ओर विशेष ध्यान दिया जा रहा है।

उत्तराखण्ड के पर्वतीय भागों में भी पर्यावरण सम्बन्धी समस्यायें उत्पन्न होने लगी हैं। कुछ वर्षों पूर्व ही इस पर्वतीय भू-भाग के अनेक क्षेत्र विशाल वनों से ढके हुए थे जिससे प्राकृतिक संतुलन बना रहने के साथ-साथ वनों से अनेक प्रकार के लाभ प्राप्त होते रहते थे। प्राकृतिक वनस्पति के धीरे-धीरे कम होने के साथ-साथ एवं जनसंख्या वृद्धि व मनुष्य की बढ़ती आवश्यकताओं के फलस्वरूप आज पर्यावरण सम्बन्धी कई समस्याओं ने विकट रूप धारण कर लिया है और उत्तराखण्ड के विभिन्न क्षेत्रों में भू-स्खलन, बाढ़, भूमि विनाश, पानी की कमी, जल प्रदूषण एवं वायु प्रदूषण जैसी समस्यायें जन्म लेती जा रही हैं। इसका एक प्रमुख कारण मनुष्य द्वारा आज भी वनों को अपनी आवश्यकताएं पूरी करने हेतु अनियंत्रित रूप से काटा जाना है। हम सभी को मालूम है कि पर्वतीय क्षेत्रों में पर्यावरण का संतुलन पूर्ण रूप से वनों पर निर्भर है अतः प्रकृति में संतुलन के लिए वनों का एक निश्चित अनुपात में बना रहना पर्यावरण के लिए अति आवश्यक है।

पर्वतीय भागों में यद्यपि पेड़ों की कई प्रकार की प्रजातियाँ पायी जाती हैं परन्तु बांज का पेड़ इनमें प्रमुख है जो पर्यावरण संतुलन एवं विकास में विशेष योगदान देता है। अन्य पेड़ों की तुलना में इसकी जड़ें विशाल एवं दूरी तक फैली होती हैं और पेड़ों के चारों ओर की भूमि को बांधे रखतीं हैं। इसके परिणामस्वरूप तीव्र वर्षा एवं इसके प्रवाह से मिट्टी को कोई क्षति नहीं पहुंचती तथा जल प्रवाह एवं रिसाव के मध्य आदर्श संतुलन बना रहने के कारण यह दशा भूमिगत जलों के स्रोतों की पूर्ति करती है। इसका प्रत्यक्ष उदाहरण आप बांज के जंगलों में देखते हैं जहां इन्हीं बांज के वृक्षों का संचित जल कई सदानीरा नालों व नदियों को जन्म देता है।

6. बाँज के वनों का ही शोषण क्यों?

उत्तराखण्ड के निवासियों का प्रमुख धंधा कृषि एवं पशुचारण रहा है। इस कारण गांवों में कृषि कार्य में काम आने वाले पशुओं तथा दुधारू पशुओं, बकरियों व भेड़ों की संख्या भी अधिक रहती है। पशु संख्या की वृद्धि के साथ-साथ चारे की आवश्यकता भी बढ़ती जाती है जो इन्हीं वनों से पूरी की जाती है। इसके साथ-साथ जाड़े व ग्रीष्म ऋतु में चारे की भीषण कमी की पूर्ति भी इन्हीं सदाबहार

हरे वृक्षों से की जाती है। इसके अतिरिक्त भोजन पकाने के लिए भी ईंधन का इन पर्वतीय भागों में कोई विकल्प नहीं है और इसी कारण इन वनों का ह्रास ईंधन जैसे उपयोग से भी हुआ है। किसान भी खाद बनाने के लिए बाँज की हरी व सूखी पत्तियों का अधिकाधिक उपयोग करते हैं तथा कृषि में काम आने वाले औजारों इत्यादि के लिए व ऐसे ही विविध उपयोगों में भी बाँज की लकड़ी अपने निहित गुणों के कारण प्राचीन समय से उपयोग में आती रही है। पिछले कुछ समय से बाँज के वनों को काटकर वहां पर नई खेती या फलों के बगीचे भी लगाये गये हैं क्योंकि बाँज के वनों की भूमि में मिट्टी अत्यन्त उपजाऊ होती है। उपरोक्त सभी कारणों से ही उत्तराखण्ड में बाँज के वनों को भारी क्षति पहुंची है और विभिन्न उपयोगों के लिए इस वृक्ष का ही अधिक शोषण हुआ है। अतः आज यह आवश्यक हो गया है कि हम उन तरीकों पर विचार करें जिससे कि बांज के पेड़ व जंगल या तो बचाये जा सकें या पुनर्जीवित किये जा सकें।

7. बाँज के पेड़ कैसे बचायें

हम सभी लोग निम्न तरीकों को अपनाकर बाँज के पेड़ व जंगलों में होने वाली हानि को कम कर सकते हैं और वातावरण संरक्षण में अपना योगदान दे सकते हैं:

(i) बाँज के पेड़ को जहां तक हो सके, सुरक्षित रखें क्योंकि एक विकसित बाँज का पेड़ बनने में लगभग 100 वर्ष लगते हैं। बांज के पेड़ के अलावा इसके समीप उगने वाली पेड़ों की ऐसी प्रजातियां भी होती हैं जो 10-15 साल में ही बड़े पेड़ का आकार धारण कर लेती हैं और बांज की अपेक्षा इन्हें काटने से बाँज के वनों में विशेष अन्तर नहीं आता। यदि आप इन्हें काटेंगे तो आपकी आवश्यकता तो पूरी होगी ही, साथ में बाँज का वन सुरक्षित रहेगा।

(ii) बाँज का वृक्ष किसी भी दशा में नहीं काटा जाना चाहिये। यदि आप समझते हैं कि बांज का पेड़ काटा ही जाय तो पुराने, सड़े या सूखे पेड़ों को ही काटें। नये तथा अविकसित बाँज के पेड़ों को विकसित होने का अवसर देना चाहिए।

(iii) बाँज के पेड़ों से चारा प्राप्त करने के लिए पत्तियों को ही काटिये और छोटी-छोटी शाखाओं को फिर बढ़ने के लिए छोड़ दें। यह देखा जाता है कि चारे के लिए कभी-कभी पेड़ों को बिल्कुल नंगा कर दिया जाता है। यह विधि वैज्ञानिक नहीं है। जहां तक हो सके बहुत अल्प मात्रा में केवल पत्तियां ही काटें।

चित्र 8 : पेड़ से चारा काटने की गलत विधि

(iv) पेड़ों का कटान सदैव नियमानुकूल, नियंत्रित व वैधानिक रूप से करना चाहिए। किसी भी जंगल/स्थान से सारे वृक्ष न काटे जायें। केवल घने वनों के बीच के मृत अथवा मृतप्राय पुराने या सूखे वृक्षों का ही कटान करें।

चित्र 9 : पेड़ से चारा काटने की सही विधि

(v) ईंधन के लिए यदि आप मिट्टी का तेल, बिजली, गैस (जहां उपलब्ध है) व नये आधुनिक साधनों का अधिकाधिक उपयोग करेंगे तो बांज के अमूल्य वन बचे रह सकते हैं।

(vi) जहां तक हो सके लकड़ी से बने कृषि यंत्रों के स्थान पर लोहे से बने एवं आधुनिक कृषि यंत्रों का उपयोग करना चाहिये। इससे भी काफी सीमा तक बाँज के वनों को बचाया जा सकेगा।

(vii) आज की बढ़ती आबादी के साथ-साथ कृषि क्षेत्रों के विस्तार व फलों के बगीचों की वृद्धि को पूरी तरह रोका नहीं जा सकता। इन क्रियाओं का भी प्रभाव बाँज के वनों पर ही अधिक पड़ता है। इस रूप में हुई वृक्षों की हानि को अब हम कृषि भूमि व बगीचों के आसपास खाली जगहों में वृक्षारोपण करके पूरा कर सकते हैं। इससे अनाज और फल हमें बराबर मिलेंगे और वनों का भी विकास होता रहेगा। भविष्य में वन भूमि में कदापि खेती व बगीचे न बनाये जायें।

8. पेड़ कैसे लगायें–बचाव व रखरखाव

अभी तक के वर्णन में केवल वनों में स्थित बाँज के पेड़ों की सुरक्षा, विकास तथा रखरखाव एवं उपयोगिता का संक्षिप्त वर्णन दिया गया है ताकि जहां भी ये वन थोड़ी बहुत मात्रा में उपलब्ध हैं, उन्हें बचाकर मनुष्य एवं उसके वातावरण के लिए उपयोगी बनाया जा सके।

अगले पृष्ठों में ऐसी विधियों का वर्णन किया जा रहा है जिनमें बताया गया है कि बाँज की प्रजातियों को किस प्रकार उगायें और इनका बचाव एवं रखरखाव कैसे करें। प्रस्तुत वर्णन में केवल बांज प्रजाति को उगाने की विधियों का ही उल्लेख किया गया है क्योंकि इसके बीजों में अन्य प्रजातियों की अपेक्षा उगने की क्षमता बहुत कम होती है जबकि बांज की अन्य प्रजातियों में ऐसा नहीं है और इनकी प्राकृतिक वृद्धि स्वतः बहुतायत में होती रहती है।

प्रथम चरणः बीज इकट्ठा करनाः नवम्बर/दिसम्बर माह में बांज के बीजों को एकत्र करना चाहिए और सर्वप्रथम एकत्रित बीजों को पानी से भरे बर्तन में डाल कर देखें। तैरते हुए बीजों को निकाल कर फेंक दें क्योंकि इनमें जमने की क्षमता नहीं होती है। जो बीज बर्तन के तले में बैठ जायें, केवल उन्हीं बीजों को बोने के लिए प्रयोग करें। ध्यान रहे कि बीजों को एकत्र करने के एक सप्ताह के अन्दर-अन्दर ही बोना आवश्यक है क्योंकि बांज के बीज की अंकुरण क्षमता बहुत सीमित समय तक ही बनी रहती है।

द्वितीय चरण: बीजों का बोना: बीज बोने के लिए निम्न तीन विधियों का प्रयोग करें:

(i) बीजों का सीधे रूप में बोया जाना—इस विधि के अन्तर्गत नमीयुक्त क्षेत्रों में उपयुक्त स्थान छांटकर बीजों को मिट्टी में लगभग ढ़ाई सेंटीमीटर गहराई पर गाड़ देना चाहिए (चित्र 10 अ)

चित्र 10 : अ

(ii) दूसरी विधि के अन्तर्गत बाँज के बीजों को क्यारियां बनाकर बोना चाहिए। तीन माह से छह माह बाद जब ये बीज अंकुरित होकर कुछ बड़े हो जायें, इन्हें पृथक—पृथक पौलीथीन के बैग में स्थानान्तरित कर देना चाहिए। यह विधि सबसे अधिक उपयुक्त मानी जाती है क्योंकि इसमें रोपण केवल अच्छी तरह अंकुरित पौधों का ही 45x45x45 सेमी. आकार के गड्ढ़े खोद कर किया जाता है (चित्र 10 ब)

(iii) तीसरी विधि के अन्तर्गत बीजों को पृथक-पृथक पौलीथीन के बैगों में प्रथम वर्ष से ही बो दिया जाता है और साधारणतया दूसरे वर्ष इसका रोपण पौलीथीन बैग सहित इसके निचले भाग को फाड़कर 45x45x45 सेमी. के आकार के गड्ढ़े में किया जाना चाहिए (चित्र 10 स)

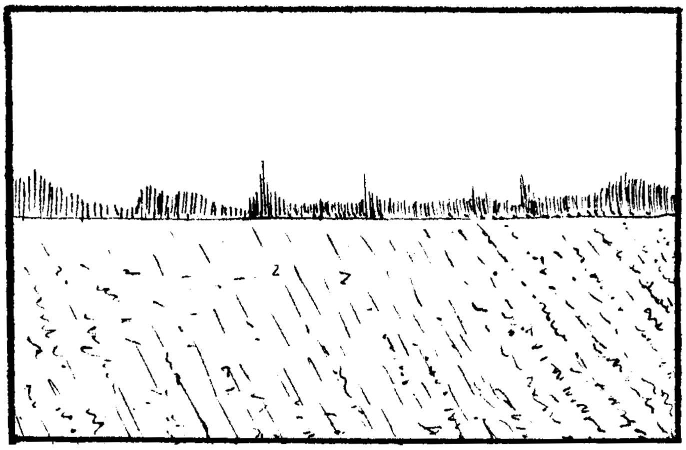

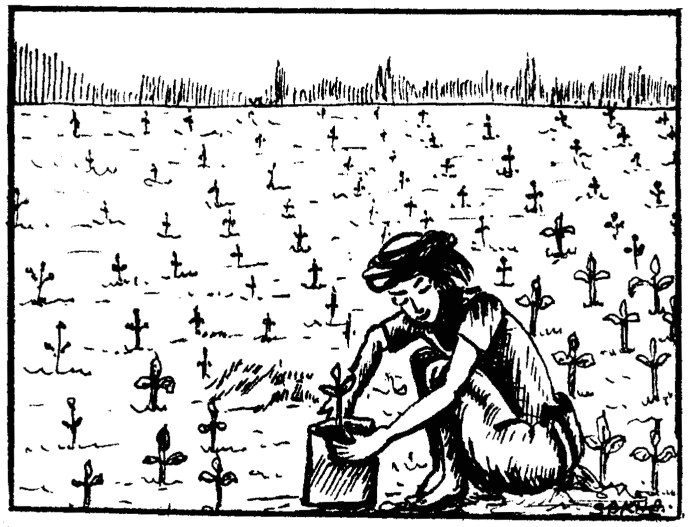

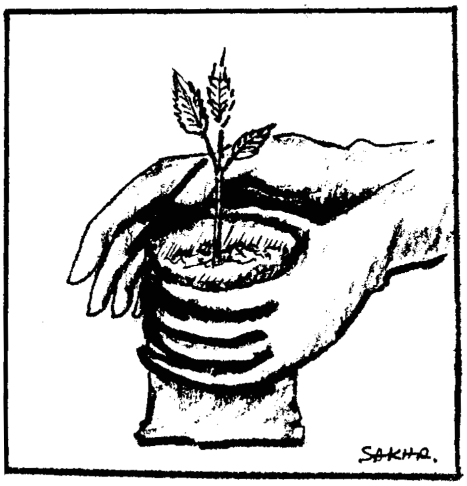

चित्र 10 : ब

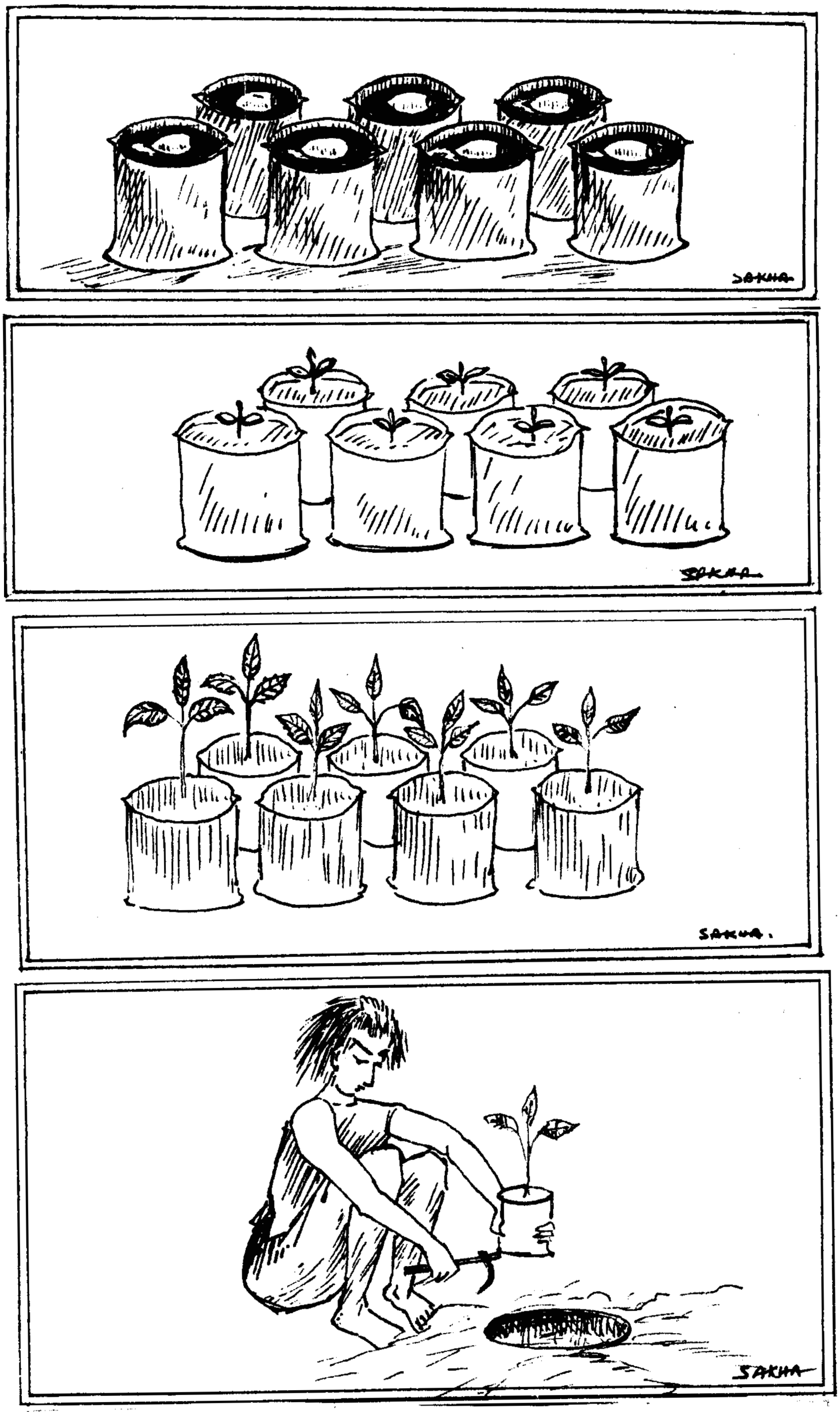

चित्र 10 : स

9. पौधों का बचाव व रखरखाव

बीजों को बोना और पौधों का रोपण करना ही पर्याप्त नहीं है वरन् पौधे के बड़े होने तक जानवरों से इसका बचाव करना अधिक जरूरी है। साथ ही यह भी देखें कि आप द्वारा बोये गये बीज और लगाये गये पौधे ठीक बढ़ रहे हैं या नहीं और इसके लिये समय-समय पर निराई-गुड़ाई व सिंचाई का विशेष ध्यान रखना चाहिए विशेषकर पहले दो वर्षों में। ऐसा करने पर कुछ वर्षों में आपके द्वारा लगाये गये वृक्ष बांज के वनों में परिणत हो जायेंगे।

आप लोगों को वन और चरागाहों को बचाने और इनके नियंत्रित उपयोग के लिये सामाजिक रूप से घेर बाड़ की योजना बनानी चाहिए और आप स्वयं देखेंगे कि किसी भी स्थान को घेर बाड़ करके यदि जानवरों की चराई के लिए कुछ समय तक बिल्कुल बन्द कर दिया जाय तो घास व पेड़ पौधे स्वयं ही खूब बढ़ जाते हैं (चित्र 11 अ,11 ब)

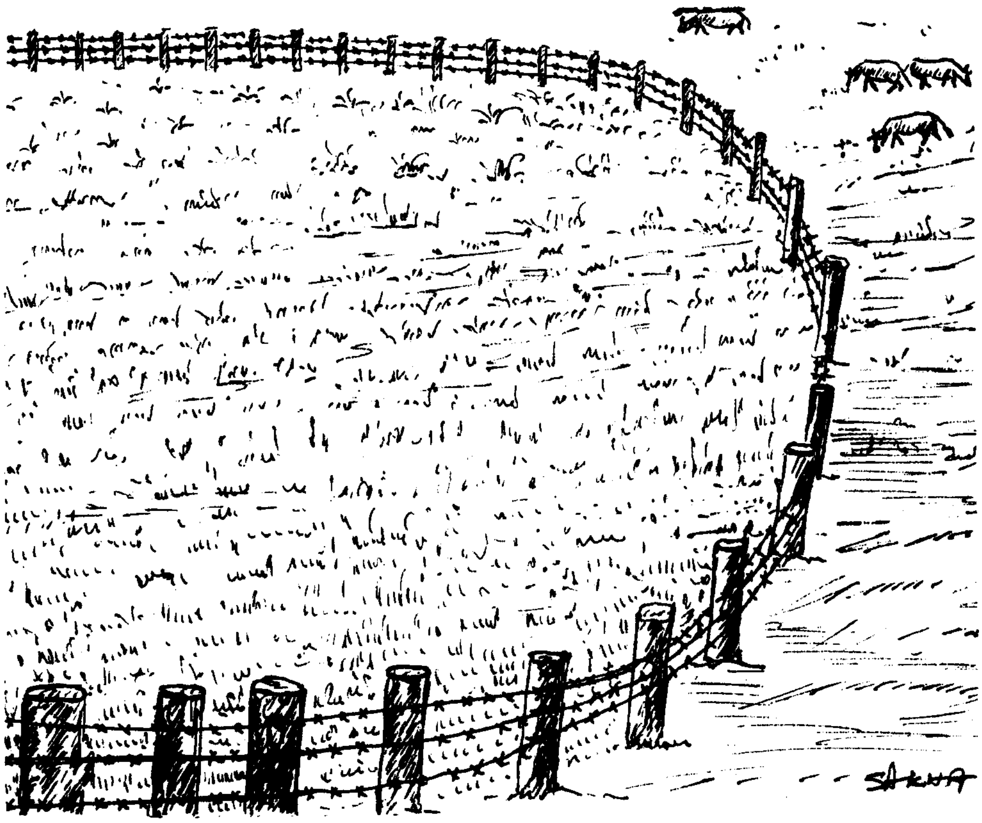

चित्र 11 : अ

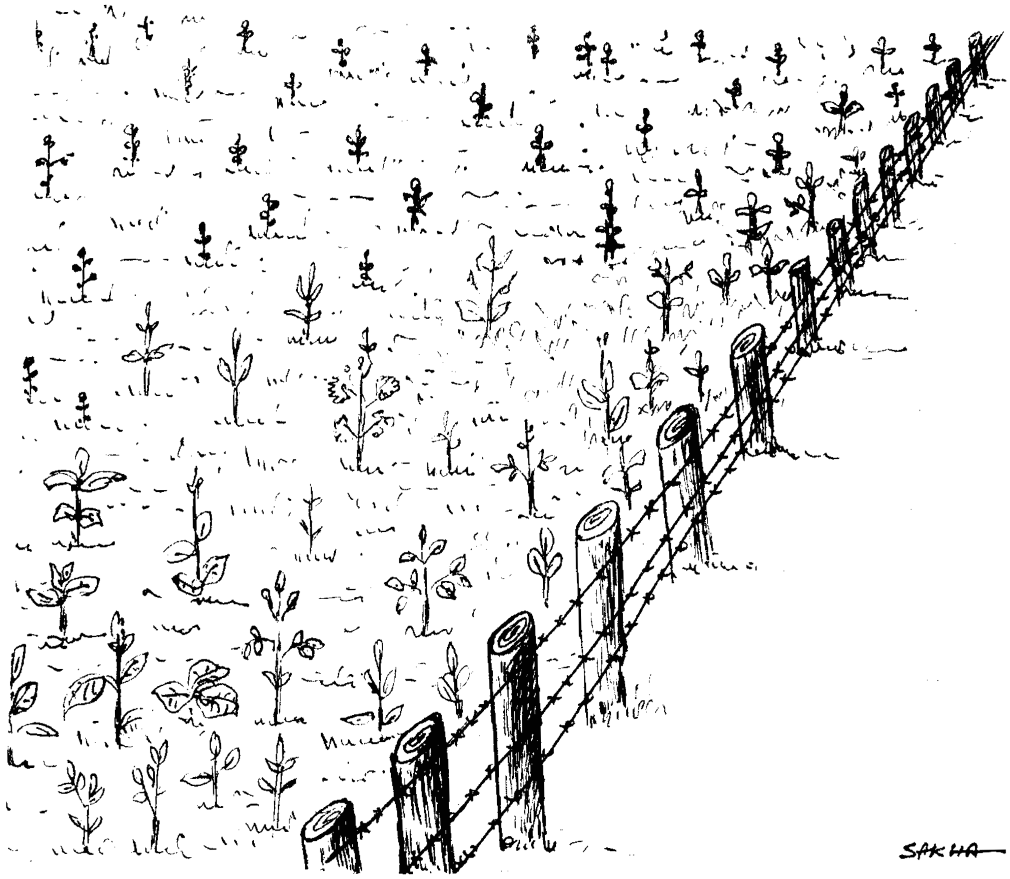

चित्र 11 : ब

10. निष्कर्ष

आज जबकि प्राकृतिक एवं जीव विज्ञानों में निरन्तर शोध के फलस्वरूप मनुष्य एवं सभ्यता के विकास के लिए ज्ञान का अपार भण्डार उपलब्ध है, इस ज्ञान को व्यवहारिक तकनीकी ज्ञान में परिणत और एक साथ उपलब्ध कराने के बहुत कम प्रयास हुए हैं। उत्तराखण्ड अंचल में भी इस ज्ञान का उपयोग क्षेत्रीय समस्याओं को हल करने के लिए नहीं हो पाया है।

आज की बढ़ती हुई वातावरण की समस्याओं के साथ यह जरूरी है कि उपलब्ध वैज्ञानिक ज्ञान का अधिकाधिक उपयोग किया जाय अन्यथा आने वाले कुछ ही वर्षों में बाँज के जंगलों का पूर्ण विनाश सुनिश्चित है। आज के अनुसंधानकर्ताओं का कहना है कि बांज के पेड़ काटने से न केवल इसके वन एवं संसाधन समाप्त हुए हैं वरन् इसका दुष्प्रभाव इन वनों में पाये जाने वाले बहुत से महत्वपूर्ण जीव-जन्तुओं (जैसे भालू, काकड़, घुरड़, सूअर, थार, बाघ इत्यादि) व

पेड़ पौधों पर भी पड़ा है और ऐसा अनुमान है कि जीव-जन्तुओं व पौधों की कई प्रजातियों या तो लुप्त हो चुकी हैं या लुप्त प्रायः हैं। इस सबके अतिरिक्त जल के स्रोतों का अभाव, जो एक व्यापक समस्या के रूप में बढ़ती जा रही है, निश्चित रूप से बांज व इसकी प्रजातियों के विनाश का ही परोक्ष परिणाम कहा जा सकता है।

पिछले पृष्ठों में आप बाँज के पेड़ के महत्व, वितरण, उपयोग एवं संरक्षण सम्बन्धी तथ्यों की जानकारी प्राप्त कर चुके हैं और यह भी देख चुके हैं कि यह पेड़ किस प्रकार इस क्षेत्र के पर्यावरण विकास एवं प्रकृति में संतुलन बनाये रखने में सहायक है। इसलिए यह आवश्यक है कि आप इसका अधिक से अधिक ज्ञान लेकर इसके बचाव, संरक्षण एवं विकास की ओर कार्य तो करें ही परन्तु साथ ही इस ज्ञान का प्रचार-प्रसार अपने गांव एवं निकटवर्ती क्षेत्रों में उन लोगों के मध्य भी अवश्य करें जो इसके महत्व व गुणों से अनभिज्ञ हैं। यह याद रखें कि बाँज जैसे उपयोगी पेड़ का संरक्षण वस्तुतः स्वयं आप ही का संरक्षण है।

तालिका 1

उत्तराखण्ड में बाँज की प्रमुख प्रजातियाँ

क्रम सं.	प्रजाति का स्थानीय नाम कुमायूँ	गढ़वाल	वितरण समुद्रतल से ऊँचाई के अनुसार	फूल देने का समय	फल देने का समय
1.	फलियाँट बाँज या फनियाट बाँज	हरिन्ज बाँज	900 मी. से 2000 मी. (3000 फीट से 6600 फीट तक)	मार्च से अप्रैल	अक्टूबर से दिसम्बर
2.	बाँज	बाँज	1200 मी. से 2500 मी. (4000 फीट से 8300 फीट)	अप्रैल से मई	अक्टूबर से दिसम्बर
3.	रियांज बाँज	सांज बाँज	1800 मी. से 2450 मी. (6000 फीट से 8100 फीट)	अप्रैल से मई	दिसम्बर से फरवरी
4.	तिलोंज बाँज	तिलंज या मोरू बाँज	1800 मी. से 3000 मी. (6000 फ़ीट से 10000 फीट)	अप्रैल से मई	दिसम्बर से फरवरी
5.	खरसू या खरू बाँज	खरसू या खरू बाँज	2100 मी. से 3500 मी. (7000 फीट से 11600 फीट)	मई से जून	जून से अगस्त

तालिका 2
बांज की विभिन्न प्रजातियों में मुख्य अंतर

क्रम सं.	प्रजातियों का स्थानीय नाम: कुमायूं	प्रजातियों का स्थानीय नाम: गढ़वाल	पेड़ की अधिकतम ऊंचाई	पेड़ की अधिकतम गोलाई	पत्तियों का आकार	फल/बीज
1.	फलियांट बाँज या फनियांट बांज	हरिन्ज बाँज	26 मी. (85 फीट)	4 मी. (13 फीट)	8.75 सेमी.से 17.5 सेमी. लम्बी व 3.75 सेमी. से 7.5 सेमी. चौड़ी होती है। पत्तियों की दोनों सतह हरी और चमकीली होती हैं।	1.5 सेमी. से 1.75 सेमी. लम्बे होते हैं तथा फल का निचला भाग केवल सहपत्र चक्र से घिरा रहता है।
2.	बाँज	बाँज	31 मी. (100 फीट)	4.5 मी. (15 फीट)	7.5 सेमी.से 15 सेमी. लम्बी व 2.5 सेमी. से 5 सेमी. चौड़ी होती है, पत्तियों की ऊपरी सतह चटक हरी तथा निचली सतह सफेद होती है।	2 सेमी. तथा फल का एक तिहाई या आधा भाग सहपत्र चक्र के द्वारा ढ़का रहता है।
3.	रियांज	सांज	24.5 मी. (80 फीट)	3 मी. (9.5 फीट)	10 से 20 सेमी. लम्बी तथा 3.75 से 8.75 सेमी. चौड़ी होती हैं, पत्तियों की ऊपरी सतह हरी व चमकदार तथा निचली सतह पीली या सफेद-पीली होती है।	2 सेमी. लम्बा तथा एक तिहाई या आधा भाग सहपत्र चक्र द्वारा ढ़का रहता है।

...क्रमशः

क्रम सं.	प्रजातियों का स्थानीय नाम: कुमायूं	गढ़वाल	पेड़ की अधिकतम ऊंचाई	पेड़ की अधिकतम गोलाई	पत्तियों का आकार	फल/बीज
4.	तिलौंज बाँज	तिलन्ज बाँज या मोरू बाँज	31 मी. (100 फीट)	4.5 मी. (15 फीट)	5 से 10 सेमी. लम्बी तथा 2.5 से 5 सेमी. चौड़ी होती हैं पत्तियों की दोनों सतह चमकीली व गहरी हरी होती हैं।	2.5 सेमी. लम्बा होता है तथा फल का एक तिहाई या आधा भाग सहपत्र चक्र द्वारा ढ़का रहता है।
5.	खरसू बाँज या खरू बाँज	खरसू बाँज या खरू बाँज	31 मी. (100 फीट)	3.6 मी. (12 फीट)	5 से 12.5 सेमी. लम्बी तथा 2.5 से 7.5 सेमी. चौड़ी होती है। पत्तियों की ऊपरी सतह चमकीली हरी व निचली सतह भूरी व पीलापन लिए होती हैं।	1.90 से 2.5 सेमी. लम्बा होता है तथा फल का निचला भाग ही केवल सहपत्र चक्र के द्वारा ढ़का रहता है।